THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL
LIBRARY
OU_180767
UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 81.6 | V 31 Var Accession No. G.H. 1965

Author वर्मा, श्याम कुमार |

Title वर्षा - मंगल | 1954

This book should be returned on or before the date last marked below.

वर्षा मङ्गल

श्याम कृष्ण वर्मा 'राजदाँ'

प्रकाशक
कुमारी सरोज वर्मा
वाणी प्रकाशन
प्रयाग

प्रथम बार
१९५४

मुद्रक—
मगन कृष्ण दीक्षित
दीक्षित प्रेस
प्रयाग

मूल्य १)

अपनी मालती को.....!

जिसकी प्रेरणा का

यह साकारीकरण है.....!!

स्प्रेम.....!!!

आपसे !

"वर्षा मङ्गल" मेरी कविताओं का प्रथम प्रकाशित संग्रह है। वर्षा के दृश्यों के प्रति हृदय की अनुभूतियों का गीतों में साकारीकरण ही इसका विषय है और इसी कारण अन्य कविताओं के प्रत्युत इन्हें ही पहले प्रकाशित करा रहा हूँ। कविताएँ कैसी हैं यह मैं आपसे पूछता हूँ! हिन्दी में आधुनिक समय में बहिर्जगत काव्य का विशेषकर गीत रूप में अभाव सा दिखाई देता है। कवि अपने अन्तर्जगत को पाठक के सम्मुख स्पष्ट करने में विशेष व्यस्त है। किसी प्राकृतिक वस्तु विशेष पर किसी का अभिव्यक्तीकरण सामूहिक रूप में दृष्टिगोचर नहीं होता। ऐसी स्थिति में मुझे अपना यह प्रयास मौलिक दिखाई दिया। आशा है पाठक इस धृष्टता के लिए क्षमा करेंगे।

मेरे विचार से गद्य व पद्य की सीमाएँ मिल नहीं सकतीं। जीवन तथा जगत में उनके उद्देश्य भिन्न हैं। संगीत का पद्य के अन्तर्गत अपना स्थान है। गीतों के शुद्धतम व अनुकरणीय रूप ग्राम गीतों में संगीत की उपस्थिति स्पष्ट दिखाई देती है। अतः छन्दः तुक तथा लय कविता के आवश्यक अंग ज्ञात होते हैं। कम से कम आज की छन्द लय व तुक आदि से मुक्त कविता सूर तथा मीरा के पदों की भाँति गीतकारों का कण्ठाभरण नहीं बन सकती। ठीक है कि आज का विज्ञान पोषित शोषक युग अपनी जटिल समस्याओं से मनुष्य को शुष्क बनाए दे रहा है किन्तु लय ताल व छन्द युक्त कविता आज की समस्याओं के प्रति भावुक हृदयों की अभिव्यक्ति के अनुरूप नहीं है ऐसा सोचना शायद ग़लत है। उधर गद्य तो ऐसे विषयों का स्फुरण करने के लिए करबद्ध तत्पर हो है। फिर कविता के साथ यह अनाधिकार चेष्टा क्यों? यह ज़बरदस्ती के प्रयोग क्यों?

ग्रामगीतों की दूसरी विशेषता, उनमें काम (Sex) की प्रचुर मात्रा है। सौंझे बोलै चिरई, सकारे बोलै मोरवा, कोरवा छोड़ दे बालमा" शब्दों

में अपनी प्रेयसि की भावना को व्यक्त करने वाले किसी अल्हड़ देहाती कवि ने कितनी व्यंजनापूर्ण शैली में सम्पूर्ण रात्रि के सहवास के पश्चात् भी अतृप्ति का संकेत किया है। इस असन्तोष की झलक मीरा के पदों में भी मिलेगी। काम (Sex) कोई डरने, घृणा करने या सभ्यता से इतर समझने की वस्तु नहीं है जैसा कि आजकल के कतिपय साहित्यकारों के व्यवहार तथा प्रदर्शनों से प्रतीत होता है। आधुनिक आविष्कारों ने स्पष्ट कर दिया है कि काम भावनाओं का दमन (Suppression of Sex) अत्यन्त विनाशकारी वस्तु है तथा उसका सुरुचिपूर्ण नियमन (Sublimation of Sex) शायद संसार की सबसे बड़ी शक्ति। मेरे विचार से अतृप्त काम का संगीतात्मक अभिव्यक्तीकरण ही शाश्वत काव्य का बीजमंत्र है। इसका स्पष्ट रूप आज भी हिन्दी के रीतिकालीन तथा संस्कृत के कवियों की रचनाओं में मिल जायगा जहाँ केशवदास 'कमला कुच कुंकुम मण्डन पंडित' विष्णु के करों से भिक्षा माँगने का संकेत करते हैं तथा कालिदास मेघदूतान्तर्गत

वामाश्चास्याः कररुहपदैर्मुच्यमानो मदीयै-
मुक्ताजालं चिरविरचितं त्याजितो दैवगत्या ॥
सम्भोगान्ते मम समुचितो हस्त संवाहनाना
यास्यत्यूरुः कनककदलीस्तम्भ गौरश्चलत्वम् ॥ लिखते हैं।

भक्ति कालीन कवियों ने भी इस शक्ति का दमन न कर के उसका नियमन ही किया है। स्वयम् तथा परमात्मा में उन्हें पत्नी तथा पति का सम्बन्ध मानना ही पड़ा है। कबीर सरीखे रहस्यवादी पिया की सेज पर सोने को आतुर हो उठे हैं काम के लौकिक आकर्षण से मुक्ति पाने के लिए उसी को पारलौकिक प्रेम का माध्यम बनाना ही पड़ा है जो काम नियमन (Sublimation of Sex)का स्पष्ट उदाहरणहै। आज का साहित्यकार शायद इतनी स्पष्टता से डरता है फिर भी सांकेतिक रूप में तो उसे अपने इस प्रकार के विचारों को व्यक्त करना ही पड़ता है। खड़ी बोली हिन्दी काव्य में रहस्यवाद इत्यादि कतिपय सफल प्रयोगों के कारण

प्रकृति के क्रोड़ में स्त्री पुरुष के स्वाभाविक आकर्षण पर आधारित कविता द्विवेदी युग के प्रादुर्भाव से साथ साथ सीमित सी हो गई तथा कतिपय कवियों के प्रयासों के प्रत्युत भी विशेष उन्नति न कर सकी। किन्तु कविता के इस वास्तविक स्वरूप का पुनरुत्थान आवश्यक तथा अवश्यम्भाव्य है।

रोटी, शोषण, पूँजीवाद तथा अन्य समस्याओं के प्रति जागरूक होना तथा जनता को जागरूक करना प्रत्येक कवि का कर्त्तव्य है किन्तु उसके कर्त्तव्यों की इतिश्री यहीं नहीं हो जाती और न आजकल के कतिपय प्रयोगशीलों की भाँति कुछ ऐसी अजीब सी बात कहना जो अद्भुद रस के परिपोषण का सहारा लेकर साहित्य का सम्पत्ति बनने का प्रयत्न करे काव्य के विभिन्न अंगों का प्रस्फुरण कर सकती है। अतः कविता की बहुमुखी उन्नति के लिए प्रत्येक रस प्रकार व विषय की सफल रचनाओं का साहित्य में अपना स्थान होना चाहिए ! किसी एक वाद के पीछे बिना नकेल के ऊँट की तरह भागना तथा औरकिसी चीज़ की परवाह न करना साहित्य के क्षेत्र में अराजकता का परिचायक है। कवि को जहाँ वर्षा ऋतु में सन्ध्याकाल की ललिमा में वर्षा के चरणों से छुटे जावक के रंग का आभास होता है वहीं नहीं।

टप टक टपक रही है छाजन
फटे अगरखे अर्ध नग्न तन

× × ×

आशा में भविष्य के कहते
बरसो बरसो घन मतवारे

कृषकों को कैसे भूल सकता है।

'पाटल' शब्द का प्रयोग गुलाब के अतिरिक्त साधारण सुमनों के लिये भी किया गया है। इसके अतिरिक्त मैंने भाषा सम्बन्धी अन्य स्वतन्त्रताएँ भी ली हैं जिसे कदाचित् भाषाविद् अनुचित प्रयोग कहने का कष्ट करें। किन्तु गेय तत्व को अधिकतम करने में उनकी अनिवार्यता के कारण मैं उनके

प्रयोग के लोभ का संवरण न कर सका। कलाविद् मेरी इस स्वतंत्रता पर शायद न ध्यान दें। जैसे "मुझे पिया की याद दिलाए" न लिख कर "मोहे पिया की याद दिलाए" में मैंने 'मोहे' का प्रयोग "अपने" के अर्थ में किया है, जो रूप खड़ी बोली में प्रचलित नहीं है। किन्तु गीतों में गेयता प्रधान है तथा भाषा का अंचल सभी सुन्दर वस्तुओं को संकलित करने के लिए तत्पर रहता है। और इसलिए शबनम, सबा, साक़ी आदि उर्दू के शब्दों का भी प्रयोग मैंने यथा स्थान किया है।

हैं गगन पर डोलते बादल तरल,
हैं अवनि पर जागते पागल विकल,
हैं जगाते हाय आधी रात तक
ये तुम्हारी याद ये क़ातिल सबा।

में मुझे शब्दों के चयन में एक विशेष ध्वनि तथा सुरुचि का आभास सा प्रतीत हुआ और मुझे इस प्रकार लिखने पर वाध्य होना पड़ा। अतएव मुझे अपने इस प्रयोग से संतोष है।

प्रस्तुत चयन में पहले ३१ गीत पावस पर हैं तथा पश्चात् के २१ गीत पावस के प्रयाण समय कवि की उपहाराञ्जलि के प्रसून हैं। ये वर्षा में प्रफुल्लित होने वाले पुष्पों के प्रति हैं। परिशिष्ट स्वरूप दर्शन शीर्षक वर्षा से सम्बन्धित एक कहानी भी है जिनके पात्र म्यूर, चातक शीत व विद्युत् सरीखे हैं। अन्त में आपसे सहानुभूतिपूर्ण पर्यवेक्षण की आशा में :

किशलय कुञ्ज
प्रयाग
दीपमालिका सम्वत् २०१०

केवल :—
श्याम कृष्ण वर्मा 'राज़दाँ'

पावस

		पृष्ठ
वन्दना	...	१५
स्वागत गीत	...	१६
१—कितना विरही आकाश	...	१७
२—ढुलका मत इतना जल बादल	...	१८
३—बरस रहे बादल, मचल मचल	...	१६
४—सावन की अँधियारी रजनी	...	२०
५—किधर चले बादल मतवारे	...	२१
६—बादल तेरी ले लूँ बलाएँ	...	२२
७—काले बादल बरसे	...	२३
८—भूरे सफ़ेद ये वायुयान	....	२४
६—बादल बरस रहे	...	२५

		पृष्ठ
१०—हो रहा वर्षा न थम्हती	...	२६
११—किसने गाया यह मेघराग	...	२७
१२—यह इन्द्रधनुष	....	२८
१३—घन घोर घटाओं को ले	...	२९
१४—अँधियाला बढ़ता जाता है	...	३०
१५—ये बादल	...	३१
१६—क्या समर क्षेत्र है आसमान	....	३२
१७—यह अँधेरी रात यह पुरवा हवा	...	३३
१८—ये छिटके छिटके से बादल	...	३४
१९—घन इतना घोर शोर मत कर	...	३५
२० —आयी सुभग वात	...	३६
२१—डोलती है डाल	...	३७
२२—हे यक्षराज के मेघदूत	...	३८
२३—आ गई बरसात रे	...	३९
२४—झर झर बरस रहे घन कारे	...	४०
२५—झीनी झीनी लागि झरी	...	४१
२६—हूँ देख रहा घुंघरारी घटा	...	४२
२७—घन पश्चिम नभ में स्वर्ण वर्ण	...	४३
२८—घन आच्छादित नभ सांध्यकाल	...	४४
२९—मत दे घन कष्ट किनारों को	...	४५
३०—नभ गंगा में आ गयी बाढ़	...	४६
३१—बज उठा गगन में विदा तूर्य	....	४७
—विदा गीत	...	४८

पाटल

		पृष्ठ
१- फूल उठी मालती	...	५१
२—यह गन्धराज के फूल	...	५२
३—सजनि माधवी फूली	...	५३
४—पुष्पित हुए अनार	...	५४
५—ये रजनीगन्धा के पाटल	...	५५
६—हे कामिनी	...	५६
७—शृङ्गार कर रहा हरसिंगार	...	५७
८—सरवर में खिल रहे सरोज	...	५८
९—ये चल दल पाटल चम्पा के	...	५९
१०—जूही की कलियाँ मुस्काईं	...	६०
११—नेवाड़ी के सजल पाटल	...	६१
१२ बेला के फूल खिल रहे हैं	...	६२
१३—तूल से ये फूल गुड़हल के	...	६३
१४—खिली मौलिश्री	...	६४
१५—नयन से फूल नरगिस के	...	६५
१६—फूली प्रातःकाल चमेली	...	६६
१७—अनुराग साकार पाटल	...	६७
१८—वैजयन्ती	...	६८
१९—शेफालिके	...	६९
२०—मालती कि वल्लरी	...	७०
२१—फूल उठी कुमुदिनी	...	७१
--दर्शन	...	७२

पावस

वन्दना गीत

तेरी वीणा के तार तार
बज रहे आज, हैं निकल रहे बन मेरे अन्तर की पुकार।

मैं एक अकिंचन सा प्राणी,
जानता न तुतली भी वाणी,
प्रेयसि भी मेरी पाषाणी,
है पास किन्तु हृदयोद्गार।

आदरणीया अग्रज वनिता,
है मुझ पर तेरी ही ममता,
बन जाती जो मेरी कविता,
अथवा मैं तो मूर्खता सार।

चरणों में शत शत अभिवादन!
स्वीकार करो यह अभिनन्दन!
यह आवेदन! 'कर दो पावन
अरु अविरल मेरा गीत ज्वार'।

स्वागत गीत

मेघों के कृष्ण निकष पर
ये चाँदी की रेखाएँ।

घन आपस में जब मिलते;
जब उनके हृदय मचलते;
आलिंगन हित कस जातीं
उनकी पृथु पुष्ट भुजाएँ।

विद्युत कर उठती कूजन:
'है कितने मधुर मिलन क्षण'
पहनाती निज प्रेमी को
वक पुष्पों की मालाएँ।

स्वागतघन को! विद्युत को!
शत स्वागत पावस ऋतु को!
प्रेमी मिलने प्रेयसि से
वापस विदेश से आयें।

१

कितना विरही आकाश, कि जिसका अश्रुपात बरसात !

तारे नभ उर पर मालों से
हैं उसके उर पर छालों से
जिन पर मधुर चाँदनी का है लेप लगाती रात !

हुआ प्रतीक्षा में जो शाश्वत
रातो दिन असफलता आहत
घुल घुल कर हो गया इसी से नीला नभ का गात !

'कुछ तो सहानुभूति दिखा रे !
अपने सों का दुःख मिटा रे !
जितने बिरह व्यथित प्राणी हैं उन पर कर पविपात' !

२

हुलका मत इतना जल बादल !

किसी विरहिणी की आँखों से
गिरते होंगे आँस् के दल।
सुधि में परदेशी साजन के
अन्तर होता होगा विह्वल।

देख न ले कोई सम्बन्धी,
पोंछ रही ले कर में आँचल।

मुक्त कुन्तला, व्यस्त वसन,
अँग आभूषण विहीन, चित चंचल।
प्रातःकाल अधोमुख ज्यों
रजनीगन्धा व मालती पाटल।

मत घनघोर शोर कर,
लेगी किसके आलिंगन का सम्बल।

३

बरस रहे बादल ! मचल ! मचल !

आँखमिचौनी खेल रचाती
'ढूँढो' कह, निज वदन छिपाती
खोज रहा विद्युत को बादल, बन्द किये आँखें ! सम्हल ! सम्हल !

पकड़ लिया घन ने विद्युत को,
मिला दिया अट्टहास स्मित को,
नभ के प्रांगण में चपला सँग, परिरम्भण कर कर ! टहल ! टहल !

देख देख इस मधुर दृश्य को,
सोच रहा है प्रिय अस्पृश्य को,
परदेशी साजन की स्मृति में, विरहिणि का अन्तर ! मसल ! मसल !

४

सावन की अँधियारी रजनी !

वृक्षों पर हों जगमग जगते
दीर्घ स्फुलिंगों के गुलदस्ते
है प्रज्वलित हो रही इस विधि रह रह कर ज्योतिरिंगण अनी !

सूचीभेद्य हुआ अँधियाला,
नभ पर छाया अम्बर काला,
ओढ़ कालिमा की चादर सोते हैं मानो चाँद चाँदनी !

बादल व्यर्थ प्रयास कर थके,
इतने पर भी यदि न मिल सके,
इस एकान्त निभृत रजनी में, प्याला, हाला एवम् सजनी !

५

जल्दी जल्दी पंख पसारे
किधर चले बादल मतवाले ?

झीने कभी, गहनतम कतिपय,
उज्ज्वल उज्ज्वल वर्ण सरिस पय,
उड़े पर्वताकार जा रहे हों जैसे कपास के गाले।

चाँद तुझी में दिखता छिपता,
कभी चमकता, कभी लापता,
जैसे कोई नई नवेली घूँघट टाले और सम्हाले।

शीतल पवन वेग से चलता,
लिपट रही है वृक्ष से लता,
झूम रहा है वृक्ष लता की गलबाहीं कन्धे में डाले।

इतने सुन्दर साज सजाकर,
विद्युत को निज गले लगाकर,
मौज मनाने की वेला में, रुक ! रुक ! कुछ तो मौज मना ले !

६

बादल तेरी ले लूँ बलाएँ !

बिन बसन्त यौवन ले आता ,
दिखने लगता जग मदमाता ,
फूल खिले, हरियाली छायी, चहकें चिड़ियाँ, हर्ष मनाएँ ।

मोर नाचते पंख पसारे,
बोल रहे दादुर मतवारे,
लाल लाल लो निकल पड़ीं प्रिय बीरबहूटी की सेनाएँ ।

रिमझिम रिमझिम बरसे जलधर,
रसमय हुआ नदी का अन्तर,
गा गा उमड़ उमड़ जी भर कर प्रिय पुलिनों को गले लगाएँ ।

सुन सुन कर भीषण घन गर्जन
स्वयम् मनाती जिसको मानिनि
निरख सफलता अपनी तुझको देता है दिल खोल दोआएँ ।

७

काले बादल घुमड़ घुमड़ घिर गरज गरज कर बरसे !
मोरे दो नैना उमड़ उमड़ झर पिय दरसन को तरसे !

काली कोयलिया शोर मचाए ;
मोहे पिया की याद दिलाए ;
पूछे पपीहा कहाँ ? कहाँ ? मोरा सुन सुन के जिया जरसे !

निशि अँधियारी दामिनि दमके;
गरजे मेहा तनी थम थम के;
मैं दुखियारी ! भय की मारी ! थाम लेत हिया कर से !

सूना मन्दिर दीप न बाती;
ना कोई मेरे संग सँगाती;
कौन धराए धीर ! मिटाए पीर ! लगाए अन्तर से !

८

भूरे सफ़ेद ये वायुयान
जल्दी जल्दी किसको लेकर, कर रहे किधर को हैं प्रयाण ?

हैं खड़े क्षितिज पर जो जलधर
उज्ज्वल ज्यों रजत स्फटिक शिखर
आ रहे उन्हीं महलों से ये, ऐसा ही होता है निदान।

सुर सुन्दरियाँ इन पर चढ़कर
क्या घूम रही हैं अम्बर पर
अरु देख रही सुषमा भू की बूँदों मिस करके पुष्प दान !

या छटा निरख सावन घन की
सुधि आई जब प्रमोद वन की
सुर शीघ्र चल पड़े उसी ओर निज वधुओं को कर मुक्त मान।

६

बादल बरस रहे !

घिरे चतुर्दिक से काले घन,
सब मिलकर हो गये अति सघन,
ज्यों नभ में हो महज़ एक घन यों वपुष कस रहे।

कभी मूसलाधार बरसते,
क्षण में झीने झीसे रसते,
देख सफलता निज गर्जन मिस जलधर हरष रहे।

दीख रहा सारा जग जलमय,
नदियाँ-नाले और जलाशय,
सिमट सिमट जल भर जी भर कर अन्तर सरस रहे।

अन्धकार बढ़ता जाता है,
दिन में ही निशि घन लाता है;
पावस में जिसके हित मिलनोत्कण्ठित तरस रहे !

१०

हो रही वर्षा न थम्हती !

कभी धीमे से बरसतीं, फिर पकड़तीं ज़ोर,
चिटचिटातीं बूँद भू पर गिर मचातीं शोर,
घुमड़ घिर घिर कर घटाएँ हो रही हैं अति सघन सी।

हो सकेंगी सुस्थिता नीले निलय के अंक,
रूप का आधिक्य यौवन भार ले भी रंक,
रिझाने उच्छृंखल प्रिय घटाएँ शृंगार करतीं।

सद्यस्नाता कामिनी सी वसन गीले पहन,
कर रही मिलनोत्कण्ठित भार यौवन वहन,
राह में वर्षा निरख अभिसारिका सी मौन धरती।

११

किसने गाया यह मेघराग ?

धू धू करती थी दिशा दिशा ,
तपते थे प्रतिक्षण दिवा निशा ,
दीपक गाया था, जिससे थी सारी धरती में लगी आग !

ग्रीषम था दीपक का प्रभाव ,
जिसका ही करने को अभाव ,
गा दिया मेघ, आ गये झूम कर जलधर जैसे मत्तनाग ।

हो गया शान्त धरती का तन,
उत्फुल्ल प्रकृति मिस नवयौवन,
व ह आदि पुरुष यह देख देख है मस्त गा रहा सानुराग !

१२

यह इन्द्रधनुष !

आगमन निरख पावस घन का
पथ निरख रही निज प्रियतम का
किसकी चितवन साकार हुई लेकर सतरंगा शुभ्र वधुष ?

यौवन का पुनरपि आवर्त्तन
पल्लवित व पुष्पित अवनी तन
इस सतरंगे वातायन से क्या देख रहा है आदि पुरुष ?

ले लिया शाप दे दिया हृदय
अवनति में भी जो गौरवमय
चित्रित पथ से है उतर रहा क्या फिर से भू पर नृपति नहुष ?

१३

प्राची का यह पवन, कर रहा गमन,
किधर ?
घन घोर घटाओं को ले!
प्रखर वेग से चला प्रभञ्जन,
जैसे मेरे उर का कम्पन,
तरु तरु को झकझोर, कर रहा शोर,
मस्त !
लो पल्लव पल्लव डोले!
पयदों का उन्मुक्त प्रदर्शन,
विद्युत का जलधर सँग नर्त्तन,
रिमझिम का संगीत, गा रहा मीत,
श्रवण !
कर मस्त मोर लो बोले!
स्वाती का नक्षत्र बरसता,
वांछित पाकर हृदय सरसता,
झीनी झरती बूँद, पी नयन मूँद,
चंचु
मदमस्त पपीहे खोले!

१४

अँधियाला बढ़ता जाता है।

प्रखर वेग से चला प्रभन्जन,
घुमड़ घुमड़ घिर गरज रहे घन,
निरख हो रहा पुलकित तन मन,
वर्षा की मादक मदिरा पी पल्लव पल्लव मदमाता है।

पंछी अम्बर में मँडला कर
जल्दी जल्दी जाते हैं घर,
बूँदें झरने लगी लो उधर,
प्रिया स्मरण रत वर्षा में भी, पंथी चलता ही जाता है।

किसी निभृत वातायन पर आ,
कज्जल कलित नेत्र से बरसा,
कर आँसू दो चार, सिसकता,
कोई इस मनहर वेला में गीत वेदना के गाता है।

१५

ये बादल !
हैं जलधि हृदय का प्यार।

बादल मिस निःश्वासों से
है छा जाता संसार।

जलधि चन्द्र का प्यार पुराना
नित्य चाहना उसको पाना
परिवा से पूनम तक प्रतिदिन
बढ़ता जाता ज्वार।

यत्न किया पाई असफलता
आलोड़न मिस बढ़ी विकलता
भू को छोड़ उठा अम्बर में
अन्तर का उद्गार।

शशि तक पहुँच न पाया फिर भी
उमड़ घुमड़ चहुँ दिशि घिर घिर भी
यही शोच रो आर्त्तनाद कर
हाय! मिल गया क्षार।

१६

क्या समरक्षेत्र है आसमान ?

दिक् वनिताओं को चूम चूम
रथ हाँक चतुर्दिक घूम घूम
आखेट मग्न था नृपति सदृश कुछ ही क्षण पहिले अंशुमान ।

सहसा छिप गया घटाओं से
घिर गया जलद सेनाओं से
गिर रहे अवनि पर निष्फल हो जलधर सन्धानित बँद बाण ।

घन सेनाएँ हो गयीं विजित
नभ पुनः सूर्य से आच्छादित
जो शेष जलद छिटके बिटके है अरिदल विक्षुब्ध म्रियमाण ।

१७

यह अँधेरी रात यह पुरवा हवा !
हैं गगन पर डोलते बादल तरल,
हैं अवनि पर जागते पागल विकल,
हैं जगाते हाय आधी रात तक
यह तुम्हारी याद, यह क़ातिल सबा !!

जब कभी क्षण भर निकलती चाँदनी,
या चमक उठती कभी सौदामिनी,
याद आ जाती मुझे सहसा तभी
वह तुम्हारी बात, वह काफ़िर अदा !!

सो सकेगा कौन ऐसी रात में,
कट सके यदि रात केवल बात में,
क्या कहूँ है आ रहा कितना मज़ा
यह गुलाबी जाम यह हल्का नशा !!

हो हमारी ! किन्तु ऐसी रात में,
दूर हो मुझसे भरी बरसात में,
प्यार करता हूँ तुम्हें मैं मिल गयी
इस अनोखे जुर्म के क़ाबिल सज़ा !!

वृक्ष से रह रह लिपटतीं बेलियाँ,
कर रहीं मदमस्त हो अटखेलियाँ,
आह भर कर थाम लेता हूँ हृदय,
ज़ुल्म बेअन्दाज़ ! यह दिल से दोआ !!

१८

ये छिटके छिटके से बादल !
नीला नभ ! चमकीले तारे !!

अवनी से मिलन असम्भव है
यद्यपि उसका वपु अभिनव है
इस विरह व्यथा में नभ पागल
तारे उसके आँसू खारे !!

वर्षा विरहिनि जब रोती है
बूँदों की संसृति होती है
घन उसकी आँखों के काजल
घुल घुल कर घुल जाते सारे !!

अवनी पर भी लाखों विरही
जिनकी कटती ही रात नहीं
उनको घन भी लगते घायल
तारे लगते हैं अंगारे !!

१६

घन इतना घोर शोर मत कर।

तू बरसे चाहे जी भर कर
अनवरत झूम दस बीस प्रहर
घनश्याम रूप निज दिखा दिखा मिलनातुर मग्न मोर मनहर॥

बार बार प्रिय गरज गरज कर
करता है क्यों यह भीषण स्वर?
तू क्या कहता है जैसे कुछ समझ नहीं पड़ता है जलधर॥

क्या तेरी प्रेयसि भी निष्ठुर
सुनती नहीं यथा विनती स्वर
सह न सका यह इससे उसको तू फटकार रहा है जी भर॥

२०

आयी सुभग वात,
असित रात,
बरसात।

धारे विविध वपु बलाहक सिधारे,
कभी घोर वर्षा कभी सित फुहारे,
करते कभी भूमि पर झूम पविपात॥

घन कुन्तलों की सहज सुन्दरी रात,
गाले रुई से जलद श्वेत अवदात,
झीनी झड़ी मिस रही सूत सा कात॥

हैं खेलते व्यस्त शतरंज रतिमार,
खिड़की खुली झर रहे मेघ रसधार,
देते कभी प्रिय कभी प्रियतमा मात॥

२१

डोलती है डाल, चातक बोलता है।

घिर रहे घन घोर वपु नभ में चमकती दामिनी है,
है बरसती बूँद रिमझिम झूम सजला यामिनी है,
खोलता घूँघट कली का, वायु हौले डोलता है॥

बढ़ रही है प्यास जितना ही अधिक जल पा रही है,
वायु का कण कण मुखर कर विश्व भर में छा रही है,
हाय स्वाती के बिना घन, रस नहीं विष घोलता है॥

है न प्रिय प्रेषित हलाहल नतरु पी जाता पपीहा,
भले स्वाती नखत आया, किन्तु बीता शुष्क ही हा!
पी कहाँ? पी! पी कहाँ? कह चंचु प्यासा खोलता है॥

२२

हे यक्षराज के मेघदूत !
हे कालिदास-कल्पनाधार !!

जल्दी जल्दी जा रहे चले,
उज्ज्वल श्यामल कोमलऽरु भले,
यह देख महाकवि का अविरल
था उमड़ पड़ा हृदयोद्गार ॥

पर्वताकार सिन्धु उर ज्वार,
प्रियतम की करता है पुकार,
विरहिणी यक्षिणी से कह लेगा
विरही का सन्देश सार ॥

पथ पांथ बताकर यथा तथा,
यक्ष प्रेयसि का पुनः पता,
था किया विदा कवि कुल भूषण
ने पहना तुझको बकुल हार ॥

२३

आ गई बरसात रे।

ग्रीष्म के आतप तपन और स्वेदकन
का मनो करने चले बादल शमन,
पूर्व प्रेषित दूत सा उसके सजल
आ गया मन्थर त्रिविध है वात रे॥

वसुमती से उठ रही सोंधी उसास,
ले रही उत्कंठिता सी दीर्घ श्वास,
आ गये प्रेमी बलाहक अधिक पास,
हो रहा भू का वपुष रस स्नात रे॥

सिमिट चारों ओर से नीलाभ जल,
प्रियतमा की निठुरता सा सरित तल,
बढ़ चला पल पल अधिक एवम् अटल,
समर्पण से बढ़ चले जलजात रे॥

२४

झर झर बरस रहे घन कारे।

छाया घटाटोप अँधियारा,
नहीं टूटती जल की धारा,
जब तक बिजली नहीं चमकती
नहीं सूझता हाथ पसारे॥

टप टप टपक रही है छाजन,
पवन चल रहा है सन सन सन,
फटे अँगरखे अर्ध नग्न तन
थर थर काँपते कृषक बिचारे॥

निज घरनी को गले लगाये,
बच्चों को भी पास सुलाये,
आशा में भविष्य की कहते
'बरसो बरसो घन मतवारे'॥

२५

झीनी झीनी लागि झरी।

रुनझुन रुनझुन नूपुर बाजे,
मदमाती पावस में नाचे,
गर्जन के मृदु मंद्र ताल पर
मुक्त कुन्तला मेघ परी॥

लहरों से ये काले जलधर,
है उच्छ्वसित सिन्धु सा अम्बर,
डूब गई है इसी ज्वार में
स्वर्ण विनिर्मित चन्द्र तरी॥

गर्जन है चिंघाड़ मनोहर,
रहा बूँद मिस अविरल मद झर,
अम्बर के कानन में मानों,
क्रीड़ा करते करिनि करी॥

२६

हूँ देख रहा, घुँघराली घटा, अपने वातायन से।

रिमझिम रिमझिम का जलतरंग,
घनघोर गर्जना है मृदंग,
खुद खुश हो रही, सुधि बुधि खो रही, वर्षा निज गायन से॥

सन्ध्या बेला में अरुण रंग
छा गया प्रतीची में अभंग,
क्या जावक छुटा, अम्बर में लुटा, वर्षा के पायन से॥

या ये अम्बर का लाल रंग,
सीमन्त सजाता है अनंग,
क्या झीनी झड़ी, मोती की लड़ी, पहिनाता चायन से॥

२७

घन पश्चिम नभ में स्वर्ण वर्ण
हो चले शीघ्रतर सिन्दूरी।
निशि के काले काले बादल
प्रातः हो जाते सोने के,
दिन की आभा में दिख पड़ते
सुन्दरतर रजत खिलौने से,
मानो पावस साक्षात् कर रहा
नभ की आशाएं पूरी॥
गंगा के उच्छल चल जल में
अन्तिम किरणों की अठखेली,
आ गयी निकट तरिणी जिसने
थी लाखों बाधाएँ झेलीं,
गति शिथिल शिथिल मानो कटती
ही नहीं तनिक बची दूरी॥
जैसे प्रेयसि का रुप रंग
वैसे पावस का सान्ध्यकाल,
उसके वक्षस्थल पर शोभित
मुक्तावलि सी सित वकुल माल,
गंगा का चंचल उत्तरीय
प्रेयसि सी वर्षा ऋतु रुरी॥

२८

घन आच्छादित नभ सान्ध्यकाल।

हैं निज गृह जाने को आतुर,
पर होती है बरसात प्रचुर,
दिन भर के थके पंथियों को
आश्रय देता है तरु तमाल॥

नीली लहरों से काले घन,
मिश्रित उनमें सित जलद सघन,
ज्यों मान सरोवर की लहरों
पर तिरते हों अगणित मराल॥

सरिताओं के वक्षस्थल पर,
अगणित लहरों की चहल पहल,
ज्यों खिसल रहा हो उत्तरीय
फिर फिर लेती उसको सम्हाल॥

———

२६

मत दे घन कष्ट किनारों को
तेरा ही जल तो सिमट सिमट
भर देता तटिनी का अन्तर,
युग युग से विलग किनारों का
बढ़ जाता और अधिक अन्तर,
हे सकल सृष्टि के सुखदायी,
मत दुख दे इन बेचारों को।

तरिणी मिस दूत एक का जब
जाता है पास दूसरे के,
तेरा ही जल बनकर लहरें
डालता विघ्न गहरे गहरे,
मत कुटिल जगत सा बन रे घन!
मिलने दे निष्ठुर! प्यारों को।

मिटते जाते पर युग युग से
अगणित प्रयत्न कर चुके पुलिन,
यह विकट परिश्रम विकलान्तर
पर मिल न सके एको पल छिन,
लहरें हैं या पानी उठ उठ
कर गिनता इनकी हारों को॥

३०

नभ गंगा में आ गयी बाढ़ ।

उसके जल का विस्तार तरल
ही है मानों नभ में बादल ,
ढह रहे मनो भीषण रव कर
विद्युत के अगणित बँधे पाढ़ ॥

लो डूब चले सारे तारे
ये बाढ़ प्रपीड़ित बेचारे ,
अरु दौड़ दौड़ कह रहा अनिल
'आओ सब मिल लें इन्हें काढ़' ॥

नभ के ऊपर भी क्या नभ है ?
जो बरसाता वर्षा में पय ;
तारे तो अम्बर के वासी
उन पर भी पड़ती विपद गाढ़ ?

३१

बज उठा गगन में विदा तूर्य ,
जाता है पावस दूर देश ।

रिमझिम रिमझिम का गीत तरल ,
विद्युत का नर्तन प्राण विकल ,
घन का मृदंग, तरु के दर्शक ,
संगीतोत्सव कर चला शेष ॥

गा रहीं उर्मियाँ विदा राग ,
उपहार रूप में लिए झाग ,
जलदों की सेनाएँ समेट ,
चल पड़ा बसाने नव निवेष ॥

जाते हो जाओ, पूर्ण काम ,
मेरा भी लो अन्तिम प्रणाम ,
पर जल्दी आना पुनः लौट ,
धारे प्रिय श्यामल धौत वेष ॥

विदा गीत

उड़ चले बलाहक वर्षा के,
ले कवि का अन्तिम नमस्कार।

बज रहा गगन में विदा तूर्य,
चमका पक्षों पश्चात् सूर्य,
मिट रहा गगन का अन्धकार॥

ले उर्मि करों में विविध फूल,
अरु चूम चूम प्रिय रूप कूल,
मुखरित कलकल हृदयोद्गार॥

बनराजि हरित परिधान पहिन,
मोती से उन पर चढ़ा तुहिन,
देती अन्तिम पुष्पोपहार॥

पाटल

९

फूल उठी मालती ।

साक़ी सी वल्लरी
पवन को पिलाति खड़ी
पाटल के अगणित प्यालों में मधु ढालती ॥

कर देता पवन विकल
पाता अंचल न सम्हल
पल्लव परिधान हरित रह रह सम्हालती ॥

देता झकझोर पवन
हो जाता पुलकित तन
मुग्धा सी शंकित हो प्रिय से रति पालती ॥

२

यह गन्धराज का फूल।
ख़ुश्बू इसमें कहीं अधिक पर नहीं एक भी शूल॥

पय सा श्वेत, हृदय सा कोमल,
दश दल का यह सुन्दर पाटल,
भूरा जिसका कोष केन्द्र में है सुगन्ध का मूल॥

पावस है पृथ्वी का यौवन,
रिमझिम नूपुर का रुनझुन स्वन,
देख रहा है नृत्य पल्लवों के झूले में झूल॥

तितली करती इसका चुम्बन,
भँवरी करती हैं आलिंगन,
चर्चित करता उनके मुख पर यह पराग की धूल॥
यौवन में मद मस्त खेलता फाग समय को भूल॥
यह गन्धराज का फूल।

३

सजनि माधवी फूली।

आभूषित ज्यों स्वर्ग किन्नरी
आज लदबदा उठी बल्लरी,
फूल उठे अगणित गुच्छों में पुष्प श्वेत और तूली॥

पवन वेग से इसे झुलाता,
वृक्ष झूम कर गले लगाता,
माधव के कन्धे में बाहें डाल डाल कर झूली॥

हरे लाल धब्बों से अगणित
इसकी सारी श्वेत सुसज्जित,
खेल चुकी हो जैसे प्रिय से होली कोई नई नवेली॥

४

वर्षा ऋतु के स्वागत में लो पुष्पित हुए अनार।

अगणित फूल खिल पड़े सत्वर,
छिपी पत्तियाँ डाल व तरुवर,
लाल लाल प्रस्फुटित हुआ ऐसा अन्तर का प्यार॥

पावस है पृथ्वी का यौवन,
प्रकृति सजाती पुष्पों से तन,
अरु अनार है वसुन्धरा की वेणी का सम्भार॥

काले भँवरे लाल फूल पा,
लिपट रहे रस पी गुन गुन गा,
कृष्ण तथा राधा का जैसे आलिंगन व्यापार॥

५

ये रजनी गन्धा के पाटल।

दिन में रहते सभी संकुचित,
निशि में पुष्पित तथा सुगन्धित,
पीले पीले पाँच पाँच दल के ये अगणित लघु लघु कोमल ॥

भँवरे रस पीकर उड़ जाते,
नहीं लौटकर मुख दिखलाते,
दूर बेवफाओं से रहने खिलते रजनी ही में केवल ॥

उर में ही रस रह जाता है,
कोई उसे नहीं पाता है,
यौवन की उद्गम वेला में युवती ज्यों विराग से व्याकुल ॥

६

हे कामिनी !
वनराजि की अभिमानिनी !!

तव पुष्प कोमल टूटते
बस एक लघुतम स्पर्श से ,
हो उठे जैसे विकल प्रिय के स्मरण से ही विरहिणी ॥
हो जाय पुलकित या स्वजन के स्पर्श से ही भामिनी ॥

पीले हरित पल्लवों पर
अगणित रूपहले पुष्प वर ,
ज्यों नील नीरद में चमक उठती क्षणिक सौदामिनी ॥

तेरा क्षणिक सम्भार वर ,
हरिताभ पीपल वृक्ष पर ,
ज्यों रात भर ही चमक पाती ज्योतिरिंगण की अनी ॥

७

शृंगार करर हा हरसिँगार।
झर रहे फूल
नत शुष्क मूल
चलती है जब पुरवा बयार।
तरु जीर्ण हुए
शत पुष्पों के
आभूषण रखता है उतार।
धारण करता
है सुन्दरता
नव नव सुमनाभूषण सुधार।
ये अरुणोज्ज्वल
लघु लघु पाटल,
आभूषण कल
है पहन रहा ज्यों मस्त मार।
बूँदें झरतीं
वर्षा जलकी,
जैसे हलकी
शिव शिर से गंगा की फुहार।
लगता ज्यों सचमुच सर्पहार।

८

सरवर में खिल रहे सरोज।

ऊपर अर्ध प्रस्फुटित यौवन,
नीचे हरित हरित आवेष्ठन,
कलियों को लख यों कहता मन,
आधे खुले ढके हैं आधे अगणित पुष्ट व तुंग उरोज॥

मीन लोचनों के उपमान,
सुन सुन कर यह निज अपमान,
कमलों को लख होता भान,
मानो अगणित हो प्रेयसि दृग आज रहे प्रतिस्पर्धी खोज॥

भँवरों ने मन वांछित पाया,
गुन गुन का संगीत सुनाया,
हुआ सूर्य का भी मन भाया,
प्रिय को पा दिल खोल, दोआएँ देते ये तुझको आसोज॥

६

ये चल दल पाटल चम्पा के।

पीले पीले अति चमकीले,
मानो सारी सुन्दरता ले

हो खन्ड खन्ड आ गिरे अवनि
पर इधर उधर कण शम्पा के।

हो गये कृष्ण, चंचल, उन्मन,
लगता न किसी पाटल से मन,

हैं विरह व्यथित क्या वंचित हो
भँवरे इनकी अनुकम्पा से?

१०

जूही की कलियाँ मुसकाईं ।

झीना झीना विस्तार हरित
जिस पर लघु लघु पाटल मुकुलित,
ज्यों व्याकुलता के परदे पर हो सुन्दरता की परछाईं ॥

हरिताभ व पुष्पित व्यस्त वसन
में छिपा न पाती रुरु यौवन,
अगणित अनुकरण प्रियतमा के लख मेरे मन को अति भाईं ॥

ये प्रेयसि तो मेरा भी मन,
मधुकर बनकर करता कीर्त्तन,
पवनोद्वेलित मैं चूम रहा मुख मोड़ मोड़ वे शरमाईं ॥

११

नेवाड़ी के सजल पाटल।
प्रपूरित गन्ध मधु परिमल ॥

लताएँ लग रही हैं मस्त मयख़ाने के साक़ी सी,
थिरकती झूमती रहतीं मधुप रशना सुनाती सी,
रुपहले पुष्प के प्याले अदा से भर पिलाती सी।

पवन जब खींचता आँचल।
मचल कर हो रहीं चंचल ॥

बहुत मदहोश हो कर झूमता है और गाता है,
लता को चूमता है और उसे दिल से लगाता है,
कभी धज्जी गरीबों की अनिल अपने उड़ाता है।

भिगोता है उसे दृग जल।
वही आकाश में बादल ॥

१२

बेला के फूल खिल रहे हैं।

जो झूम रहे हैं मदमादे,
झोंके से नहीं हवा के ये,
अपनी ही मादक ख़ुशबू मे ये होकर मस्त हिल रहे हैं॥

उजले ये स्वच्छ चाँदनी मे,
अगणित हैं पुष्प एक अनी से,
बीती विरह विभा प्रात हुआ भवरों से गले मिल रहे हैं॥

कितना उदार अन्तर इनका,
है इतना सुन्दर वपु जिनका,
है भँवरा एक मगर देखो, दे उसको सभी दिल रहे हैं॥

१३

तूल से ये फूल गुड़हल के।

किनारे पाँच दल और बीच डंठल,
लगा डंठल सिरे पर पीत परिमल,
दलों में हैं शिरायें स्पष्ट अगणित,
सलोने और चिकने स्वच्छ मख़मल से॥

झुके नीचे लगी इस भाँति लाली,
अधर खोले निकाले जीभ काली,
निरख भ्रमरावली दे क्रुद्ध ताली,
छुड़ाती अथक छवके मधुप अरिदल के॥

सुनहले पर सुगन्धि ज़रा नहीं है,
कि सोने में सुहागा भी कहीं है?
इन्हें लख ज्ञात् होता तो यही है—
मनोहर लोग हैं निष्ठुर बड़े दिल के॥

१४

हरिताभ परिधान, पुष्पित द्रुम वितान,
पाटल लघु लघु, खिली मौलिश्री।

बाँधे मधुप मंद्र झंकार मंजीर,
दिन में पिपासित मिटाने हृदय पीर,
चंचल चपल चाल, अज्ञात् वपु बाल,
अभिसारिका बन चली सुन्दरी॥

कहीं भूल मत जाय यह पंथ विकला,
नव यौवना स्मित मुखी लाज शीला,
सखियाँ सुभग साथ, पकड़े सभी हाथ,
सँग माधवी मालती वल्लरी॥

निश्चेष्ट तरु, ओस की बूँद झरती,
पाया न मिल प्रिय खड़ी शोच करती,
मानो विमल अश्रुपूरित विकल चक्षु,
होकर विफल और लज्जा हरी॥

१५

नयन से फूल नरगिस के
हुए आषाढ़ में पुष्पित।

बनी हैं पंखुरी जिनकी,
नयन की वक्र पलकों सी,
बहुत थोड़ा खुले मानो
उनींदे नेत्र हैं अलसित॥

नयन का कर लिया चुम्बन
मधुप ने पुलकमय तरु तन,
कि होती जा रहीं हैं बन्द
पलकें पा हृदय ईप्सित॥

अकेले एक पादप में
बहुत से फूल हैं मानो
किसी दर्शनाकांक्षित के
अनेकों नेत्र हों विकसित॥

१६

फूली प्रातःकाल चमेली ।

राशि राशि रश्मियां बिखरतीं
कलियाँ जिनपे [illegible] [illegible]तीं ,
सौरभ के सरवर में तिरतीं ,
देखें चलकर आओ एली ॥

झरते क्षण क्षण [illegible] [illegible]ाल मे
मोती सम [illegible] माल से
किसी मु[illegible] [illegible] आक्लान्ता के
करतीं जो [illegible] संग अठखेली ॥

हिलतीं मलय आकुलित डालें
मलयज से मानों रति पालें ,
थकित रत्यान्त सम्हाल ले चली
शफाली! मालती सहेली ॥

१७

अनुराग साकार पाटल।

अरुणिम विभा पूर्ण,
केशर कलित चूर्ण,
कोमल विमल दल
प्रभापूर्ण परिमल॥

प्रातः प्रफुल्लित,
तुहिन विन्दु भूषित,
सौरभ सहित रुरु
अनिल क्लान्त चंचल॥

विकलांग अरु क्षीण,
विरही विकल दीन,
अरु रक्त उर कम्प
से मुक्त चल दल॥

१८

वैजयन्ती !
हरित पल्लव, फूल फूले, कत्थई, अरुणिम, वसन्ती ॥

नील नभ की नील छाया ,
सान्ध्य स्वर्णिम रश्मि काया ,
मिल बनाते हैं छटा जनु इन्द्रधनुषी तरु सुमन की ॥

देख रवि मुख लज्जिता सी ,
तुहिन बिन्दु सुशोभिता सी ,
स्वेदकण आभूषिता सी, विभा प्रेयसि के वदन सी ॥

रूप का सम्भार इतना ,
पा रही है प्यार इतना ,
रूप रति का, स्नेह स्मर का, बन गये हैं किंवदन्ती ॥

१६

शेफालिके !

है ज्योत्स्ना का मानसर ,
तरु पत्र मर्मर वीचि स्वर ,
जिस पर त्वरित गति तैरती
री मत्त मन्जु मरालिके ॥

तुझमें सुगन्धि भरी हुई ,
अरु स्निग्धता निखरी हुई ,
तू री समग्रोद्ययान की
एकत्र पुष्पित तालिके ॥

सायं पवन देता सुला ,
प्रातः मधुप देता जगा ,
उद्यान की अति यत्न से
पालित सुकोमल बालिके ॥

[५१:५

२०

होले होले डोलती
मालती कि वल्लरी।

मेघ के मल्हार पर,
रश्मियों के तार पर,
झूलती है सुन्दरी॥

है झुला रहा पवन,
चूम पुष्प मिस वदन,
जैसे उर्मि अरु तरी॥

तुहिन विन्दु माल वर,
गुंजन के ताल पर,
नर्त्तन रत किन्नरी॥

२१

निशाभिसारिका समान फूल उठी कुमुदिनी ।

श्वेत अंगराग अंग ,
केशर से स्वर्ण केश ,
नख से शिख तक सलज्ज
धौत वस्त्र श्वेत वेश ,
ज्योत्स्ना में रश्मिमयी बनी चन्द्र हासिनी ।

सरसी की आरसी में
लखने निज वस्त्र वेश ,
पवनोद्वेलित झुकती
पा जाती हृदयेश ,
चकित भ्रमित भूली सी पूर्ण काम कामिनी ।

स्वयम् झूम झूम मस्त
कर देती चंचल जल ,
करती प्रिय चरणों में ,
अर्पित जब जब परिमल
रूठ गया चन्द्र जान तुहिन अश्रुराशिनी ॥

दर्शन

पी कहाँ !　　पी कहाँ !!　　पी कहाँ !!!

शान्ति से कदम्ब की डाल पर बैठा हुआ चकोर कम्पित हो गया। 'पी कहाँ' ने उसे स्तम्भित कर दिया। उसने किसी अन्य वस्तु को तो चन्द्रमा नहीं समझ लिया। उसने पुनः आकाश की ओर देखा, नेत्रों पर विशेष शक्ति देते हुए देखा, किन्तु वही चन्द्रमा; चतुदशी का लगभग पूर्ण राकेश; रजनी रानी के मंजु मुख सरिस, तारकिक ज्योत्सना के विमल वलय के सित अवगुंठन से विभूषित इन्दु। नहीं ! नहीं !! उसने धोखा नहीं खाया। फिर भी यह पी कहाँ का व्यंग कैसा। उसने नीचे देखा सरिता के विमल जल में पवन द्वारा स्पन्दित उर्मियों के हृदय में निशाकर का प्रतिबिम्ब, नित्य की भाँति सुन्दर तथा चंचल। फिर इस 'पी कहाँ' का क्या अर्थ ? इसका यह तात्पर्य तो नहीं कि वह इतने दिनों से मयंक की ओर निर्निमेष निरखते हुए बिना किसी भावना की अभिव्यक्ति के साधना करता रहा किन्तु उसे मधु की एक बूँद भी प्राप्त न हुई। नहीं ! नहीं ! यह तो केवल अज्ञान था। चन्द्रमा की ओर देखने में उसे कितना आनन्द आता है ! रस का पूर्ण प्रवाह ही उसके हृदय में संचरित हो जाता है। कोई यदि उस समय उसका हृदय देख सकता ! स्वयं रजनीकर चकित हो जाता उस रस को देखकर किन्तु क्या वह दिखा सकेगा अपना हृदय इन्दु को ! हृदय भर आया उसका जिसके प्रतीक स्वरूप एक दीर्घ निश्वास निकल कर अन्तरिक्ष की ओर बढ़ चली। किन्तु कहाँ सुधानिधि और कहाँ एक व्यथित पागल हृदय का मूक संदेश वाहक ! छविमान तक पहुँचने की भी सम्भावना न थी चकोरहृदय की निरीहता पानी बनकर आखों में आना चाहती थी किन्तु उसने उसे हृदय में ही रोक दिया।

उद्वेलित हृदय को बहला कर जैसे ही उसने चन्द्रमा की ओर देखा कि पुनः एकाएक वही। पी कहाँ　　पी कहाँ !　　पी कहाँ !

फिर क्या अर्थ है इस "पी कहाँ" का। इसका यह तात्पर्य तो नहीं कि निशीथिनी शीघ्र ही समाप्त हो जायगी तब वह कहाँ पा सकेगा पी को। किन्तु उसे स्वयं इस विचार पर हँसी आ गई। अरे उसका चन्द्र उससे

दूर कहाँ जा सकता है। दिवस में तो वह और अधिक सुन्दर बनकर अत्यन्त निकट आता है। कल्पना जो उसमें अपनी रंगोपमता भर देती है। हृदय सरि तीर चन्द्रमा से उस क्षणिक मिलन की कल्पना मात्र से चकोर पुलकित हो उठा। उसने आकाश की ओर देखा—श्वेत हीरकों से पूरित दुग्ध फेन की भाँति शुद्ध तथा निर्मल आकाश सागर में मंजुल मृगाङ्क। उसने सांत्वना तथा श्रद्धा से मस्तक नमा लिया। किन्तु पुनः वही पी कहाँ! पी कहाँ! पी कहाँ!

इस बार वह झुँझला उठा। "कौन हो तुम? मेरी शान्ति को इस प्रकार क्यों भंग करते हो? देखते नहीं हो निर्मल नीले निलय में स्वच्छ सुधानिधि। चुप रहो।"

पार्श्व वाले वृक्ष से उड़कर चकोर के सम्मुख बैठते हुए पपीहे ने कहा- यह मैं हूँ, चातक। कितने दिनों से बादल की प्रतीक्षा कर रहा हूँ, किन्तु निष्ठुरता की भी सीमा का उल्लंघन करने वाला मेरा प्रिय मुझे दर्शन तक नहीं देता। उससे किसी वस्तु की कामना करना तो कदाचित् कल्पना का भी परिहास करना होगा। उसी की स्मृति में—पी कहाँ! पी कहाँ! पी कहाँ! किया करता हूँ। कदाचित् व्यथित हृदय का निःश्वास उसे यहाँ ला सके।

चकोर क्रुद्ध हो उठा। उसने कहा—मेरे सामने इतनी बड़ी दुष्कामना! तुम इसका अर्थ समझे? इसका स्पष्ट तात्पर्य है, कि तुम अपने प्रिय के दर्शन के लिए, मुझको मेरे सख्य से वंचित कर देना चाहते हो। नहीं! कदापि नहीं! ऐसा किसी स्थिति में नहीं हो सकता। इसके पूर्व कि कोई मुझे मेरे प्रिय से विलग कर सके मैं या तो स्वयं ही मर जाऊँगा या उसे ही मार डालूँगा। अरे तेरा इतना साहस!

चातक ने शान्ति से उत्तर दिया—भाई मेरा भी तो प्रेमी हृदय है। इतने दिनों के प्यासे हृदय की तृषा तीक्ष्णतम हो गई है। कण्ठ सूख गया है, अब तो 'पी कहाँ' भी नहीं कह पा रहा हूँ। प्रतीक्षा का भी कोई अन्त होता है! किन्तु मैंने तो सोचा है कि पी कहाँ! पी कहाँ! पी कहाँ! कहते कहते प्राण दे दूँगा, किन्तु जलद के प्रेम से विमुख न हूँगा। भाई! मुझ मरने वाले पर दया करो, तुम तो नित्य ही अपने प्रिय के दर्शन करते हो; हमें मरते समय ही कर लेने दो।

चकोर को दया आ जाती, यदि चातक ने अपने प्रेम को उससे उच्च तथा अपनी प्रतीक्षा को उससे अधिक सहिष्णु न बताया होता।

उसे क्रोध आया, किन्तु तुरन्त हँसी आ गई—जिसमें इतनी भी शक्ति नहीं कि अपनी व्यथाएँ अपने तक ही सीमित रक्खे, अथवा अत्यधिक अपने प्रिय से कह दे, वरन् उसके विपरीत जो पी कहाँ ! के स्वर में, निरन्तर संसार भर में प्रिय की निष्ठुरता का ढिंढ़ोरा पीटता है, वह चातक उससे अपनी तुलना कर रहा था, जो सदैव मौन रहकर अपने प्रिय तक से अपनी भावनाएँ छिपाये रहता है जिसने अपने प्रिय की कल्याण कामना तथा प्रशस्ति के लिए भगवान से दिन रात अनवरत गति से प्रार्थना की है। वह पपीहा, जो प्रेम रस की एक बूँद के लिए दिन रात प्रिय से भिक्षा माँगता है, अपनी समता उस निर्विकार प्रेमी से कर रहा था, जिसने चन्द्र से किसी वस्तु की अभिलाषा ही न की; अपना सर्वस्व दे देने में ही जिसने अपना सौभाग्य समझा तथा प्रतिदान स्वरूप प्रसन्नता के दो अश्रु अथवा सान्त्वना के दो शब्दों की भी कामना न की; केवल निर्निमेष निशाकर की ओर निरखना ही जिसने जीवन का ध्येय समझा।

चकोर की दया क्षोभ में परिवर्त्तित हो गई। वह किसी प्रकार पपीहे को प्रार्थना करने की आज्ञा देने को तत्पर न हुआ।

चातक ने उत्तर दिया—

जाके पाँव न जाय बिवाई
सो का जानै पीर पराई

तुम क्या समझ सकते हो मेरी व्यथा को चकोर। तुमने तो कभी तृष्णा का स्वाद तक नहीं पाया, वरन् तुम्हें अवश्य मुझसे सहानुभूति हो उठी होती। तुम पर तो सदैव चन्द्र रश्मि करों द्वारा सुधा बरसाया करता है। तुम क्या जानो उसका प्यास का मूल्य जिसे एक बूँद पानी मिलना जन्मान्तर से दूभर हो गया है। मेरा अभाग्य ! चाहता था कि मेघ के दर्शन करके ही मरता, किन्तु देखता हूँ कि तुम मुझे उससे भी वंचित कर दोगे। क्योंकि मैं अपनी प्रार्थना बन्द नहीं कर सकता और तुम्हें वह असह्य है। अतएव इस दुर्बल अवस्था में तुम मेरा जीवन लिए बिना न रहोगे। परन्तु निरीहता पर यह भीषण अत्याचार ईश्वर देख नहीं सकेंगे।

चकोर को यह व्यङ्ग अत्यन्त तीखा लगा। वह क्रुद्ध हो गया और चातक पर झपटना ही चाहता था कि अकस्मात मयूर की ध्वनि सुनाई दी। चकोर को ऐसा प्रतीत हुआ कि वह उसे ऐसा करने

में मना कर रहा हो ! उसने इस समस्या पर और ध्यान दिया तो उसे स्वयं अपनी भूल का ज्ञान हो गया। उसने सोचा कि जब दिवस आकर शक्तिपूर्वक उसे चन्द्रमा के दर्शन से वंचित कर देता है, तो वह उससे तो नहीं युद्ध करता। फिर यह शक्ति वह मृतप्राय पपीहे को दिखाने को क्यों उद्यत हुआ। इसीलिए न कि वह उससे अधिक शक्तिवान था। पर क्या यह उसकी भूल न थी।

इतने में धीरे धीरे पद संचालित करता हुआ, मयूर स्वयं वहाँ आ पहुँचा। सुन्दर नीली ग्रीवा, बड़ी बड़ी पंखों वाली पूँछ कितनी सुन्दर प्रतीत होती थी। नीले नयनों से ऐसा ज्ञात होता था कि वह पूर्ण विश्वास से आया था कि उसे आज प्रिय के दर्शन अवश्य होंगे। इसीलिए तो वह उसे अपनी नृत्यकला दिखाने, पूर्णरूपेण सुसज्जित होकर आया था।

उसने कहा—चकोर ! प्रेम दृष्टि देता है किसी को अन्धा नहीं बना देता। वह दोपहरी के सूर्य की भाँति आँखों को बन्द होने पर विवश नहीं करता, वरन् पूर्णिमा के चन्द्र की भाँति पुकार पुकार कर उन्हें अपनी ओर देखने को कहता है। तुम प्रेम करते हो, इसका तात्पर्य यह नहीं कि तुम किसी दूसरे को प्रेम करते न देख सको। तुम्हें तो अपना सर्वस्व लुटा कर भी दूसरों को सुखी करना चाहिए। क्योंकि तुमने स्वयं वेदना की तीव्रता का अनुभव किया है। प्रेम में परमार्थ नितान्त आवश्यक है। यह तुम्हारी साधना में चार चाँद लगा देगा।

चकोर ने कहा—यह अपनी तृष्णा का ढिंढोरा पीटने वाला तथा रस के लिए पागल भिखारी मुझसे अपनी समता करता है, जिसने दर्शन के अतिरिक्त और कोई अभिलाषा ही न की। फिर मेरा इसमें क्या दोष और यदि मैं इसे प्रार्थना करने भी दूँ, तो मैं स्वयं दर्शन से वंचित हो जाऊँगा।

मयूर ने उत्तर दिया—तुम फिर भूलते हो चातक ! यदि वह निम्नता पर आ जाय, तो तुम्हें अपनी क्षमा नहीं त्यागनी चाहिए। दूसरे प्रश्न का उत्तर तुम्हें स्वयं ज्ञात है। केवल दर्शन के उन्माद में भूले हुए हो। दिन में क्या चन्द्र तुमसे विलग नहीं होता ? पर क्या तुम उससे अलग हो पाते हो ! तुम तो उसे अपने हृदय में बिठा लेते हो, कल्पना की रजत रज्जु में आबद्ध। फिर क्या वहीं तुम थोड़े समय तक इन दुखित प्राणियों के लिए नहीं कर सकते। देखो वह तुमसे केवल अपना

प्रिय चाहता है, किन्तु मुझसे वह मेरा प्रिय चाहता है। पर क्या मैंने उसे मार डाला ?

इतने में अनवरत गति से अठइसे ने "मेघ मेघ मेघ मेघ" चिल्लाना प्रारम्भ किया।

मयूर ने पुनः कहा—वह देखो ! छोटा सा कीड़ा अठइसा मेरे ही समक्ष बादल बादल चिल्ला रहा है। क्या मेरी एक ही चोंच में उसका अन्त नहीं हो सकता, लेकिन मैं उससे कभी नहीं बोलता।

चकोर अन्यमनस्क था। किन्तु उसने चातक को प्रार्थना करने की आज्ञा दे दी। चातक ने अठइसा के साथ साथ पी कहाँ ! पी कहाँ ! पी कहाँ ! रटना आरम्भ कर दिया। चकोर तथा मयूर उनके व्यर्थ के प्रलाप से तंग आ, कुछ दूर एक पेड़ पर जा बैठे। उन्होंने बातचीत प्रारम्भ की।

मयूर ने पूछा—तुम्हारा चन्द्रमा और भी किसी से प्रेम करता है अथवा नहीं ?

"कदाचित सागर से।"

"तुमसे अधिक ?"

"नहीं शायद उतना हो। किन्तु मैं यह स्वीकार करता हूँ कि उसकी साधना महान है। उसने उसे अमरत्व दे दिया है। मेरी ही भाँति वह भी चन्द्रमा से निर्लिप्त प्रेम करता है। वासना का उसने पूर्ण दमन कर लिया है। चन्द्र के उत्कर्ष में उसका उन्नति तथा उसके अपकर्ष में उसका पतन हो जाता है ! कितना गहरा है उसका हृदय जिसमें स्वच्छ प्रेम हिलोरें ले रहा है। चन्द्र का तो पूर्ण प्रेम उसे ही मिलना चाहिए। यह तो मेरा सौभाग्य कि वह हम दोनों को सम दृष्टि से देखता है। किन्तु अन्तर स्पष्ट है। मैं केवल नाम मात्र को अमर हो सका हूँ किन्तु वह सशरीर अमर हो गया। लेकिन तुम्हारे प्रिय के तो अनेकों प्रेमी हैं। क्या वह भी किसी से प्रेम करता है। मुझे तो शंका है कि वह तुमसे भी..... नहीं...नहीं.. नहीं वह तो कदाचित् सौदामिनी की ओर अधिक आकर्षित प्रतीत होता है।

मयूर ने उत्तर दिया—सत्य प्रकट करने से डरते क्यों हो चकोर ? मैं मानता हूँ कि वह मुझसे प्रेम नहीं करता। किन्तु मुझे इससे क्या। मैं तो अपना उत्तरदायी हूँ। और अपने लिए मैं प्रिय का आकस्मिक

दर्शन ही पर्याप्त समझता हूँ। जब उसे देखकर मैं फूला नहीं समाता तथा अपनी कला का सुन्दरतम् प्रदर्शन करता हूँ। किन्तु मुझे एक बात की आशंका है कि सौदामिनी का मादक तथा विलासप्रिय सौंदर्य कहीं जलद को वासना रत कर उसके विनाश का कारण न बन जाय। यदि चपला के साथ रहकर वह निर्विकार साधना कर पाता तो कदाचित् अमर हो जाता। किन्तु अभी तो उसके दर्शन ही दुर्लभ हैं।

चातक ने पूँछा—क्या अठइसा तथा चातक को भी यह ज्ञात है कि वह विद्युत से प्रेम करता है?

मयूर ने उत्तर दिया...पपीहे को तो अपने 'पी कहाँ' से ही अवकाश नहीं! और बेचारे अठइसे को यह सुनने की शक्ति नहीं!

प्रतीक्षा की सूनी घड़ियों के पश्चात् मेघ के आगमन के चिह्न दृष्टिगोचर होने लगे—दिशाओं ने नवीन परिधान पहिने—तारकगण ने एक बार आलोकित होकर मन्द होना प्रारम्भ कर दिया, तथा धीरे धीरे आलोक पर अन्धकार की कालिमा सी व्याप्त होने लगी। इतने में एक गम्भीर स्वर ने समस्त नभ मण्डल को स्तम्भित कर दिया—चकोर के दुःख का वारापार न रहा। अभी कुछ ही समय में चन्द्रमा अदृश्य हो जायगा। इसी समय अठइसा मेघ मेघ मेघ, मेघ मेघ चिल्ला रहा था। तब पपीहा भी पी कहाँ! पी कहाँ! पी कहाँ! कह रहा था। इतने में अपने महान् रूप में जलद ने प्रवेश किया। दामिनी को वह अपने अंक में इस प्रकार छिपाये था कि वह दिखाई तक न देती थी। एक प्रगाढ़ अलिंगन में आबद्ध सावन के राजा तथा रानी ने दर्शन दिया!

मयूर ने अपने पंख फैला दिये तथा नृत्य के दो तीन भाव दिखा कर उसने तीव्र ध्वनि में प्रश्न किया—महादेवी दामिनी कहाँ हैं देव? गर्जन के तीव्र स्वर में उसने मयूर को महादेवी का ध्यान आकर्षित करने से रोका। किन्तु चपला ने उसका स्वर सुन लिया था। अतएव अपने को आलिंगन उन्मुक्त करते हुए उसने मयूर से मिलने की इच्छा प्रकट की। इतनी कान्तिमयी तथा कमनीय छटा को देखकर पवन उसे अपनाने को आतुर हो उठा तथा वह षडयन्त्र में लीन हो गया। एक भीषण शान्ति छा गई उसके मुख पर। परन्तु इस अनिन्द्य सुन्दरी सौदामिनी बाला को देख अठइसा की समस्त आशाओं पर तुषारपात हो गया। उसे इस बात की किंचिन्मात्र आशंका न थी कि समस्त जीवन

उसी की आकाशा में व्यतीत करने पर भी वह किसी दूसरे से प्रेम करने लगेगा तथा उसे बिल्कुल न पूँछेगा। उसके हृदय को विशेष धक्का पहुँचा। उसका रक्त शुष्क हो गया तथा उसी क्षण प्राणान्त हो गया।

चातक का स्वर अत्यन्त क्षीण हो रहा था। कदाचित् उसे अब कोई इच्छा ही न रह गई थी। एक समय ऐसा होता है जब प्रतीक्षा की सीमा-होनता अभीष्ट वस्तु को भी अप्रिय बना देती है। मेघ ने पुनः विद्युत को अपने आलिंगन में लेना चाहा. किन्तु वह पृथ्वी के हरित तृण, पादप, कुन्जों को देखने के लिए विकल हो तड़प उठी। बादल ने आलिंगन को प्रगाढ़ करते हुए कहा—आज मैं कुछ नहीं सुनना चाहता देवि! समस्त संसार प्रेम की प्रगाढ़ता से परिप्लावित हो रहा है। केवल अधरों को ही अधरों का प्रहरी रहने दो ताकि शब्द अवज्ञा न कर सकें।

कादम्बिनी की पलकें मधुर व्रीडा से नत हो गईं, जो एक श्वेत शबनम की बूंद के समान नेत्र पटल के कोने से लटक रही थी तथा उसकी स्मित मन्दप्रभ शान्त्य दीप की भाँति बिखर पड़ी, मानो वह कह रही हो—मुझे पुन अपने उस पाश में ले लो जो स्वय एक सम्पूर्ण संसार है। मयूर ने नाचते नाचते अपना शीश नीचे कर लिया। उसकी आँखों से आँसू गिरने लगे, इस कारण नहीं कि उसके चरण नूपुर विहीन अथवा कुरूप थे। वरन् इसलिए कि मेघ वासना रत हो कल्याण मार्ग परित्याग कर रहा था।

मेघ ने आगे बढ़ने का प्रस्ताव किया। किन्तु चपला ने केकी नर्त्तन देखने का आग्रह किया। जलद ने एक दीर्घ निनाद में अपनी इच्छा का समर्थन किया और उसकी भीषणता तथा भयंकरता पर विमुग्ध सौदामिनी उसके साथ हो ली यद्यपि वह पीछे मुड़ मुड़ कर देखती तथा मन ही मन प्रसन्न होती जाती थी। बादल अभी कुछ ही दूर गया था कि सामने से उसे विशेष प्रवाह तथा तीव्र स्वर सुनाई दिया। उसे क्या ज्ञान था कि विद्युत को हस्तगत करने के लिए अनिल ने पूर्ण सेना सुसज्जित कर ली थी। कुछ ही क्षणों में उसने देखा प्रभन्जन असंख्य धूलिकणों की सेना लिए तीव्रता से उसका ओर आक्रमणार्थ बढ़ रहा था। उसने पीछे हटकर एक सुरक्षित स्थान खोजा। बादल दुर्धुष वीर था। उसे अपनी विजय पर पूर्ण विश्वास था। एक आध बार उसने प्रकम्पन के प्रयासों को निष्फल भी किया था।

उसने विद्युत से कहा—देवि तुम यहीं ठहरो ! मैं अभी इस धूर्त को इसकी धृष्टता का पूर्ण प्रतिकार देता हूँ ।

विद्युत हँस पड़ी—देव ! तुम प्रायः यह क्यों भूल जाते हो कि मैं तुमसे इतने अटूट बन्धन में बँधी हूँ कि किसी प्रकार अलग नहीं हो सकती ।

"तो क्या तुम युद्ध में भी मेरे साथ रहोगी ?"

"क्या मेरी इतनी विनती भी न स्वीकार होगी ?"

"जैसी इच्छा ।"

पवन की सेना पास आ गई थी। बादल ने भीषण गर्जना की जिससे एक बार पवन की सेना के समस्त सैनिक दहल गये, किन्तु उसने उन्हें ललकारा तथा अपनी सम्पूर्ण शक्ति से बादल पर आघात किया । लेकिन निष्फल रहा । कुछ देर तक उन दोनों का युद्ध चलता रहा । बलाहक ने असंख्य रज वीरों को धराशाई कर दिया । किन्तु कहाँ वह एक, और कहाँ वह असंख्य ।

सौदामिनी एक तरल हँसी हँस पड़ी—पवन तुम मेरे लिए यह युद्ध कर रहे हो, किन्तु तुम मुझे पा न सकोगे ।"

मारुति ने निर्लज्जतापूर्वक उत्तर दिया—बादल की मृत्यु के पश्चात् तुम्हीं मेरा वामाङ्ग विभूषित करोगी। बादल क्षोभ से चीत्कार कर उठा और साथ ही विद्युत ने ग्लानि से अपनी अमोघ शक्ति उस पर चला दी—बड़ा भयङ्कर शब्द हुआ । किन्तु पवन तो अमर था ।

मेघ ऊपर उठने लगा । कदाचित् वह किसी नवीन युद्ध प्रणाली का आश्रय लेना चाहता था और शायद सफल भी हो जाता, किन्तु वहाँ जाकर एक नवीन शत्रु का सामना करना पड़ा । और वह था शीत ।

बादल ने पूँछा—तुम क्यों मेरे विरुद्ध हो ?

शीत ने उत्तर दिया—मैं विद्युत से प्रेम करता था तथा इसे हृदय के अन्तरतम प्रदेश में स्थान दिया था । किन्तु इसने मुझे त्याग तुम्हारा वरण किया—देखते हो मैं इसके वियोग में पीला पड़ गया हूँ तथा शनैः शनैः कालिमा भी व्याप्त होती जा रही है । यदि आज भी यह मेरे साथ हो जाय तो मेरे शरीर में पुनः सौन्दर्य तथा स्फूर्ति संचरित हो जाय । और तुम जैसे काले कुरुप के साथ तो मैं इसे किसी स्थिति में नहीं देख सकता । शीत ने एक भयंकर हँसी हँस दिया तथा बादल के मुख से निकल पड़ा—भीषण षड्यन्त्र !

पवन ने सोचा कि बादल के पश्चात् तो वह निर्बल शीत से बड़ी आसानी से चपला को ले सकेगा अतएव दोनों ने मिलकर एक साथ आक्रमण किया। बादल छिन्न भिन्न हो गया। अन्त समय तक बिजुली उसे प्रोत्साहित करती गई किन्तु अन्त में बादल का शरीर कट कट कर गिरने लगा।

इसने पूँछा—देवी तुम ?

'जहाँ तुम देव !'

मयूर ने इन बूँदों को परदेस जाते हुए साजन का आश्वासन समझा। उसे क्या पता था कि सामने बहने वाली नदी उसके साजन के शव को धूलि का कफ़न दे अनन्त प्रवाह को लिए जा रही थी।

नील आकाश चाँदनी से फिर अपना मनोरंजन करने लगा। तारे भी चमचमा उठे। और मन्द्रप्रभ चाँद लिखने लगा अपनी चाँदनी के अँचल पर करुणा का इतिहास; जिसका समर्थन कर रहा था उदास मना मयूर तथा जिसके साक्षी थे पपीहा की लाश तथा चातक का—दर्शन !